Chapter-8

अष्टम् अध्याय

भाषा समीक्षा, मुहावरें, कहावतें, न्याय

भाषा समीक्षा

संत साहित्य में भाषा को गौण माना गया है - आत्मानुभूति को ही प्रधानता दी गई है । अध्यात्मभाव से ओत-प्रोत रचनाओं में भाषा का बन्धन नहीं पाया जाता है । अखा ने भावाभिव्यक्ति में भाषा को महत्व न देते हुए कहा है -

"भाषा ने शुं वलगे भूर, जे रण मा जीते ते शूर"

- अखा

अर्जुन ने अपनी भाषा को "सूरवीर के तीर" की भाँति चोटदार और लक्ष्यवेधी कहा है । जिस प्रकार सूरवीर का तीन लक्ष्यस्थल पर लगने पर पीड़ा देती है उसी प्रकार कवि की भाषा भी मर्मस्थल पर लगने पर पीड़ा देती है । इस उक्ति को गुजरात के धिरा, भोजा, छोटय आदि अन्य कवियों पर भी प्रयोग किया जा सकता है ।

मध्यकाल में "भाषा" अर्थात् संस्कृतेतर भाषाओं का प्रयोग किया जाता था । आजकल भाषा शब्द का जितने व्यापक रूप में प्रयोग होता है उतना व्यापक उन दिनों नहीं था । अत: संस्कृतेतर प्राकृत, ब्रज, राजस्थानी आदि भाषा में रचना को श्रेष्ठ माना जाता था । संत बन्धन मुक्त जीवन व्यतीत करने के आदि होने के कारण उन्होंने वेदों, उपनिषद, परंपरित संस्कृत भाषा का बन्धन स्वीकार न कर अपनी वाणियाँ ब्रज, खड़ी बोली आदि संस्कृतेर भाषाओं में ही प्रस्तुत की ।

अभिव्यक्ति का माध्यम भी वही होना चाहिये जो सहजग्राह्य हो । सामाजिक हित के लिए साखियों की रचना तथा जनता में अध्यात्म भाव को जागृत करके उनको जीवन मूल्यों के प्रति सचेत करना ही संतों का प्रधान उद्देश्य था ।

गुजरात के संत भक्तों के जीवन में शिक्षा का अभाव होने के कारण उनकी अभिव्यक्ति की भाषा में व्याकरण आदि का ज्ञान केवल कुछेक संतों जैसे - अखा, प्रीतम आदि को ही था ।

मध्यकाल के गुजराती साखिकारों ने अपने युग की आवश्यकता को समझा तथा अपनी वाणी के द्वारा जनता में एक क्रान्ति पैदा कर दी । इस कारण संतों ने न केवल हिन्दी में साखियाँ लिखी अपितु स्वभाषा गुजराती के साथ-साथ अन्य लौकिक प्राकृत भाषाओं में भी साखियाँ लिखी ।

संतजन प्रायः परिव्राजक होते थे जो भ्रमण करते हुए साधना परक मार्गों एवं लोकोन्नयन के संबंध में उपदेश दिया करते थे । अपने भ्रमण काल में ये संत विभिन्न प्रान्तिय बोलियों से प्रभावित होते थे । उपदेश देते समय क्षेत्र विशेष की भाषा को स्वीकार कर लेते थे । अतः इनकी भाषा में विविधता पायी जाती है ।

गुजरात के संतों में धार्मिक सहिष्णुता के साथ-साथ भाषा परक सहिष्णुता भी यथेष्ट परिमाण में है । अतः अन्य भाषाओं के प्रभाव का अपनी में खुले दिल से स्वागत किया । सभी सम्प्रदायों तथा सभी प्रान्तों के लोगों के साथ सतसंग करने के कारण उन सभी प्रान्तों की प्रचलित भाषाओं का प्रभाव उनकी सखियों पर देखा जाता है । यही कारण है कि उनकी रचनाओं में पंजाबी, राजस्थानी, मराठी, अरबी, फारसी, उर्दू आदि भाषाओं के रूप पाये जाते हैं । इन्हीं कारणों से इनकी भाषा को सधुक्कड़ी कहते हैं ।

रचयिता के भावों की अभिव्यक्ति तभी सार्थक होती है जब उसकी भाषा गरिष्ठ हो । भाषा में गरिष्ठता का मूल कारण अन्य भाषाओं के शब्दों, कारको, उपमान, प्रतीकों, मुहावरे, कहावतें तथा उनकी निजी विशेषताओं को अपनी भाषा में शामिल करना । इस विधा में गुजरात के साखीकार सिद्धहस्त थे । उनके द्वारा प्रयोग किए गए भाषा रूपों की चर्चा करेंगे तथा उनकी इस प्रयोग प्रणाली की सार्थकता पर भी विचार करेंगे ।

भाषा के विविध रूप :

ब्रजभाषा -

ब्रज प्रदेश की भाषा को ब्रज भाषा कहा जाता है । इस भाषा के प्रचार प्रसार का मूल कारण धार्मिक है । कृष्णभक्ति से ओत-प्रोत समुदाय के समुदाय, श्री कृष्ण की लीला-भूमि ब्रज का पर्यटन करते थे या वहीं पर बस जाते थे ।

धर्म का एक सुष्ठ वातावरण होता था । फलत: लीलागान - भजन, कीर्तन आदि ब्रजभाषा के विकास का प्रधान कारण बना । कुछ कवि ऐसे हैं जिन्होंने पूरे के पूरे पद, साखी, भजन-कीर्तनादि शुद्ध ब्रजभाषा में लिखे हैं । कुछ कवि ऐसे हैं जिनकी गुजराती भाषा पर काव्यभाषा ब्रज का भरसक प्रभाव दृष्टिगत होता है । नरसिंह महेता, गिरधर आदि ऐसे कवि हैं जिनकी गुजराती भाषा पर ब्रज का विपुल प्रभाव परिलक्षित होता है । हमारे आलोच्य कवि नरसिंह महेता जैसा निष्ठावान और सच्चा वैष्णव भक्त दुर्लभ है । इनकी "रास सहस्त्रपदी" के अन्तर्गत ब्रजभाषा के निर्देश मिलते हैं । उदाहरण स्वरूप एक साखी प्रस्तुत है -

चाल - चाल चलता ते व्याकुल भई, ब्रजबाला ढुंढती फिरे श्याम तमाला
जाय बुझत चंपक जाई, देखो नंदजी को राई ।

साखी - पीय संग एकान्तरस विलसत राधानार,
कंध चढ़ावन को कहो, ताते तजी गयेजु मोरार ।

चाल - ताते तजी गयेजु मोरारी, लाल आप संग ते टारी,
त्यां ओर सखी अब आई, क्याइ देख्यो मोहन राइ ।
में तों मन कीधो मेरी बाई, ताते तजी गये कनाइ ।[1]

गिरधर की साखियों में भी ब्रजभाषा का प्रयोग स्पष्ट है -

करी ग्वालन कू कीलकारो, सीखे मटकी ले उतारी ।
जीत तीत थे ग्वालन धाओ महीं लूटन कू ।।

ऐसे जोरावर जब हुते, क्यों आए गोपाल भाग ही ।
दास गिरधर के हेत प्यारी, अन्तर से अनुराग ही ।।

---

(1) रास और रासान्वई - तृतीय खंड के अन्तर्गत - (पृ0 359)

देवकी कहे वासुदेवन कू तुम समरो श्री भगवान ।
काला ग्रेहे मां कथंजी अब शाह करेयो कानं ।।[1]

ज्ञानीजी की रचनाओं में भी ब्रजभाषा का व्यवहार स्पष्ट है -

गुरू जे कौ अब गुण कहे ।। सीब सौ देवे नाहे ।।
ज्ञानी जाने रामरूप ।। दूवध्या दल में नाहे ।।[2] 37

खड़ी बोली -

खड़ी बोली की उत्पत्ति शौरसेनी अपभ्रंश से हुई मानी जाती है । यह भाषा अपने आस पास की भाषा पंजाबी, राजस्थानी, ब्रज, कन्नौजी तथा बुन्देली से भी प्रभावित है ।

गुजरात के भक्तों की रचनाओं पर खड़ी बोली की छाप देखी जा सकती हैं । मुसलमानों का प्रभाव अधिक होने के कारण उन तक अपनी वाणी पहुँचाने के लिए खड़ी बोली में रचना करना आवश्यक था । कंवलदास ने साखियाँ खड़ी बोली में लिखी है । एक मार्मिक साखी द्रष्टव्य है -

चोर-चोर सबही कहै, कौन करे सन्मान,
साधु कंवल नें पी लिया घुट-घुट अपमान ।[3]

तेजानंद की साखियों में खड़ी बोली की छौंट मिलती है -

शब्द दूध धृत रामरस, मंथन करे जन कोई,
तेजा पिवे सो ही प्रेमरस, घट उजीयारा होई ।[4] 32

---

(1) पाठकजी से प्राप्त ह०लि० से उद्धृत
(2) पाठकजी से प्राप्त ह०लि० से उद्धृत
(3) माणेकलाल राणा से उपलब्ध हस्तलिपि से
(4) संत तेजानन्द - (पृ०

छोटम ने खड़ी बोली में चोटदार साखियाँ लिखी है -

सत्यपथ में पग धरो, तो उतरोगे पार[1]

- आदर को अंग

कोई कहत अहंकार में, परत ब्रह्म की छांय[2]

- जीव को अंग

उपरोक्त उदाहरणों से कवि के खड़ी बोली भाषा विषयक ज्ञान का स्पष्ट बोध होता है ।

<u>राजस्थानी</u> -

राजस्थान प्रदेश में बोली जाने वाली भाषा को राजस्थानी भाषा कहते हैं । गबरीबाई की साखियों में राजस्थानी का प्रभाव स्पष्ट है -

गबरी चित्त में चेतिये, सुं सुतो उठ जाग ।
आलस निद्र परहरो, हरि भजन को लाग ।।[3]

- चित्त चेतन को अंग

मिठाये मिठो घणो, मधुछये छे मधुर ।[4]

- सतगुरू कृपा को अंग

नजीकथी नेडो घणो, दूर थकी हरि दूर ।
सतगुरू की किरपा भये, हरि देखे भरपूर ।[5]

- सतगुरू कृपा को अंग

---

(1) छोटम नी वाणी - (पृ0 252)
(2) छोटम नी वाणी - (पृ0 254)
(3) गुजरात के संतों की हिन्दी वाणी - (पृ0 241)
(4) गुजरात के संतों की हिन्दी वाणी - (पृ0 241)
(5) गुजरात के संतों की हिन्दी वाणी - (पृ0 241)

गोविन्द किस विध पाइये, नन विषयासंग राच्या ।
आस करे प्रभु मिलन की, मन माया में नाच्या ।।[1]

- गोविन्द प्राप्ति को अंग

प्रीतम की साखियों में राजस्थानी भाषा के शब्द भी मिलते हैं -

प्रेम जड़ी अमृत झरे, वजी आठे रंग,
कहे प्रीतम जोग तणों, नित्य-नित्य नौतम रंग ।[2]

- जोगनुं अंग

रवि साहब ने राजस्थानी भाषा का प्रयोग अपनी साखियों में किया है -

नाम तणों महीमा घणों - चढ़े नाम के नाव[3]

दादू की साखियों में राजस्थानी शब्दों की प्रचुरता है -

दादू मिंही महल बारीक है, गाउं न ठाउं न नाऊँ
तासौ मन लागा रहे, मैं बलिहारी जाऊँ ।[4]

- परचा कौ अंग

उपरोक्त उदाहरणों से कवियों की राजस्थानी भाषा का ज्ञान तथा उनका उपयुक्त स्थानों पर प्रयोग की कलादक्षता का आभास होता है ।

---

(1) गुजरात के संतों की हिन्दी वाणी - (पृ0 242)
(2) प्रीतम वाणी - (पृ0 63)
(3) रविसाहब कृत काव्य संग्रह - (पृ0 83)
(4) संत सुधा सार - (पृ0 280)

मराठी भाषा -

मराठी भाषा के भक्त कवियों ने संस्कृत में निर्मित भागवत ग्रंथ का और समस्त धार्मिक रूढ़ियों के अंधानुकरण का विरोध किया । संस्कृत भाषा परम्परा का गुजरात के भक्त कवियों ने भी विरोध किया । गुजरात और महाराष्ट्र का सांस्कृतिक संबंध रहने के कारण गुजरात के कवियों पर मराठी भाषा के विभिन्न शब्द रूपों, कारकों आदि का प्रभाव पड़ा । भरूच निवासी चक्रधर स्वामी द्वारा स्थापित "महानुभाव पंथ" का प्रायः सम्पूर्ण साहित्य मराठी, गुजराती और हिन्दी के सहज मिश्रण से बना हुआ है ।

नरसिंह मेहता की रचनाओं में मराठी भाषा का प्रभाव स्पष्ट देखा जा सकता है । नामदेव के "नाभाम्हेयें नामा चा स्वामी" आदि पदांत छापों की भांति नरसिंह में "भणे नरसैयों, नरसिंहा चा स्वामी" की छाप मिलती है । नामदेव में मिलने वाले रे, भाई आई माई" रूपों का नरसिंह पर असर दृष्टिगोचर होता है । नामदेव वाणी की भांति नरसिंह वाणी में आकारांत सरल पदों के रूप, बाल-बाला, दामोदर-दामोदरा, अवनीधर-अवनीधरा, भूधर-भूधरा, कंथा-कथा भी अनेक मिलते हैं । नरसिंह के क्रिया रूपों में मराठी के "ला" प्रधान किचुला, पिउला, नसरला, होइला, गेला, पड़ीला, आइला, जागीला, हरीला आदि हैं ।

संत दादू की साखियों में मराठी का विशेष असर देखा जाता है ।

गोब्यंद गोजारे तुम्हे अम्हचां गुरू, तुम्हे अम्हचा ग्यान
तुम्हे अम्हचा देव, तुम्हे अम्हचां ध्यान ।।[1]
- निहकर्मी पतिव्रता को अंग

तुम्हे अम्हचा सील, तुम्हे अम्हचा सन्तोख ।
तुम्हे अम्हची मुक्ति, तुम्हे अम्हचा मोख ।।[2]
- निहकर्मी पतिव्रता को अंग

---

(1) संत सुधा सार - (पृ0 283)
(2) संत सुधाइ सार - (पृ0 284)

पंजाबी भाषा -

यह भाषा संस्कृत का ही रूपान्तर है । हिन्दी तथा पंजाबी इन दोनों भाषाओं में कहीं-कहीं साम्य पाया जाता है ।

दादू की साखियों में पंजाबी भाषा का प्रभाव स्पष्ट है -

दादू प्याला नूर दा, आसिक अरसि पविति
अठे पहर अल्लाह दां, मुँह दिट्ठे जीवंति ।

दादू के ते कहि गये, अन्त न आवै और ।
हमहूँ कहतें जात है, केते कहसी होर ।।[1]

ना कहि दिठठा ना सुण्या, ना कोई आखण हार ।
ना कोई उत्तो ची फिरया, ना उर वार न पार ।।[2]

रवि साहब की साखियों में भी पंजाबी छौट है -

कीड़ी खावे खांड कु, रविदास झीड़ी होय ।
जो मन को गल किजीये, तो हाथ न आवे कोय ।।[3]

- सूक्ष्म शिखामण की अंग

गुजराती भाषा -

गुर्जर प्रदेश के लोगों द्वारा बोली जानेवाली भाषा को गुजराती कहा जाता है । सौराष्ट्र, कच्छ, अहमदाबाद, कलसाड़ आदि प्रदेशों के लोगों द्वारा यह भाषा बोली जाती है ।

---

(1) संत सुधा सार - (पृ0 281)
(2) संत सुधा सार - (पृ0 281)
(3) रवि साहब नी साखियो (पृ0237)

हमारे शोध कार्य में इस भाषा का प्रमुख स्थान है । गुजरात के साखिकारों ने अपनी साखियों में इस भाषा का प्रयोग हिन्दी के साथ-साथ किया है । हमने उन्हीं कवियों को लिया है जिन्होंने हिन्दी के साथ-साथ गुजराती का भी प्रयोग अपनी साखियों में किया है । कुछ कवियों ने साखी ग्रन्थों की रचना की है तथा कुछ कवियों ने छिट-पुट रूप में दोनों भाषाओं में साखियाँ लिखी है ।

अन्नपूर्णा, चन्द्रावती, अनिशा रोशन आदि अन्य प्रान्तों से आकर गुजरात में बस गये और यहीं अपना देह त्याग किया । इन लोगों ने गुजराती भाषा को इस प्रकार आत्मसात कर लिया कि इस भाषा में विपुल रचनायें करने लगे । इन कवियों ने कहीं परिस्कृत गुजराती कहीं ठेठ गुजराती कहीं काव्यात्मक और कहीं परिमार्जित गुजराती भाषा में साखियाँ लिखी ।

(अ) <u>टकसाली गुजराती</u> :

(1) भणया-गणया पंडित हुआ, भया बांझ को फूल
फूल भया फल ना थयु, यही भणया में मूल ।।[1] 12

रवि साहब की साखियाँ भी इस दृष्टि से दृष्टव्य हैं :-

(11) नाम नजर आवे नहीं, अंधा कुटी आंख
रविदास राह भुला पड्या, कीसका काढे वांक ।।[2] 55

वस्ता ने भी टकसाली गुजराती में साखियाँ लिखकर इस परम्परा में अपना स्थान स्थापित किया है -

(111) तिन संत संगत करो, सो वाझीया कहेवाय
वाना लजावे पण धटे, हरि फल त्यांना थाय ।।

वाणी वांझणी ते सब वाझनी, चाल सब साथ
संत संगत कीधा चना, कशु न आवे हाथ ।[3]

- अंग महात्म्य को

---

(1) नि०का० - (पृ० 2)
(2) रवि साहब नी साखियों - (पृ० 236)
(3) वस्ता नी साखियों (ह०लि०)

अर्जुन ने टकसाली गुजराती में कहा है -

। ॥ दस घडीए दातण कर्यु, नव घडी अरजुन न्हाय ।
भोजन करता भव गयो, सूवानी वेल थाय ।। 57

। अर्जुन कौवा कहे, गौता हशे गमार
भोजन बने भली भांतना, करनहार हुशियार ।।[1] 58

राजे ठेठ गुजराती में कहते हैं :-

॥ तांहा छत-छती न किजीये, जहां नहीं गान वधेक
राजे आपे आंख मां काजल केरी रेख । 83

रझल रझल राजे मुए पे ठरे न ऐकु ठुर,
हजू लगी कहीं नां करे मनमां मतलब ठुर ।।[2] 78

घणों भणों ते भटके बहु, तेहने डाहो कहेशे शउ
केहे राजे जाणे नहीं आप, माथे ले ऐ लोकना पाप ।

प्रीतम गुजराती भाषा के अति महत्वपूर्ण ठेठ शब्द रूपों का उद्घाटन अपनी साखियों में करते हैं -

।। स्वासोस्वास अरू हेड़की, छींक, बगासु सिद्ध,
कहे प्रीतम ए पवन के, पाचे भाग प्रसिद्ध ।।[3] 16

अर्जुन की साखियों में गुजराती के ठेठ शब्द स्पष्ट हैं -

।।। टाणुं जोई थाणुं करी, सो दिन पाणी सींच
अरजुन बिज उगे नहीं, मर गई मांय की मींज ।[4] 59

॥1॥ अर्जुन वाणी - ॥पृ0 576॥

॥2॥ राजे कृत्य काव्य संग्रह - ॥पृ0 282 ॥पृ0 114॥

॥3॥ प्रीतमवाणी - ॥पृ0 89॥

॥4॥ अर्जुन वाणी - ॥पृ0 224॥

परिमार्जित गुजराती :

प्रीतम, निरांत, छोटम, जीवणदास, ब्रह्म ज्ञानी, जैसे अनेक भक्त कवियों ने परिष्कृत तथा काव्यात्मक और परिमार्जित गुजराती में साखियों की रचना की है। निम्नलिखित उदाहरण प्रस्तुत है :-

प्रीतम ने गुरूवन्दना करते हुए कहा है -

i) प्रथम नमुं गुरूदेव ने, जेणे आप्यु ज्ञान
ज्ञाने गोविन्द ओलख्या, टल्यु देहाभिमान ।। (पृ0 2)

ii) तृष्णा तु थाकी नहीं, खायो सब संसार
कहे प्रीतम करू दूरथी, कर जोड़ी नमस्कार ।।
- तृष्णा नुं अंग (पृ0 78)

iii) प्रकृति स्वभाव जुदो पडयो, मूले वस्तु एक
कहे प्रीतम विरला लहे, जाकु ज्ञान विवेक ।। 12
- माया नुं अंग

निरांत की साखियाँ भी परिमार्जित गुजराती भाषा में है :-

i) नेह बीना हरि ना मले, करीये कोटी उपाय ।
बीजा साधन आदरे, हिरदा शुद्ध न थाय ।। 4

ii) रहीये नामने आसरे, नहीं अवरनी आश
निरांत नमिये ताहीकु हीरदे हरि विश्वास ।।[1] 9

निरांत की भजन के पूर्व एक साखी मिलती है जिसकी भाषा शुद्ध गुजराती है -

iii) सामेरी समजणु शुं करी, पढ़ पढ़ वेद पुराण
साख अपनी जाणी नहीं, पद ना लाध्यु निरवाण ।

---

(1) नि0का0 - (पृ0 1)

काव्यात्मक गुजराती :

रवि साहब द्वारा काव्यात्मक गुजराती में लिखी साखियाँ द्रष्टव्य है -

i) मर्म लह्यो जे पण तणों, जो पामे वस्तु पार,
कहे रविदास सतगुरु मले तो पलक न लागे वार ।[1]

जीवणदास ब्रह्मज्ञानी की साखियों में काव्यात्मक गुजराती की छाँट है -

ii) अपने पिउकी वारता, कही कधी ना जाय,
कहे "जीवण" कही क्या न सकूं, ए वात उघाड़ी थाय ।[2]

राजे कहीं-कहीं काव्यात्मक गुजराती में स्पष्ट कहते हैं कि -

iii) अंध कुपमा पोते पड़ो, वीजाने तेडवाने अड़ो,
हे राजे करता भगताई, धरी राखत बाप ने भाई ।[3]

अरबी - फारसी - उर्दू भाषा :

फारस देश के लोगों की भाषा को फारसी कहा जाता है । अरबों द्वारा धर्म विषयक युद्ध के कारण फारसी लोग ईरान छोड़कर भारतवर्ष के गुजरात में हिन्दू राजा के संरक्षण में दूध में शक्कर की तरह मिल-जुलकर रहने लगे और अपने भाषा का व्यवहार करने लगे ।

मुसलमान भारतवर्ष में आकर यहाँ की भाषा सिखकर राजकार्य में इसका प्रयोग करने लगे । मुसलमानों के शासन ने भारतीय हिन्दुओं को जीविकोपार्जन के लिए अरबी-फारसी प्रधान उर्दू भाषा के लिए विवश किया । अतः हिन्दी भाषा में, अरबी-फारसी के शब्द ऐसे घुल मिल गये कि वह स्वभाषा की तरह लगने लगी ।

---

(1) रवि साहब नी साखियों - (पृ0 18)
(2) गुजरात के संतों की हिन्दी वाणी - (पृ0 131)
(3) राजे भगत कृत काव्य संग्रह - (पृ0 114)

कबीर पर इस्लाम धर्म का प्रभाव स्पष्ट है । कबीर सूफियों के द्वारा भी प्रभावित हुए थे । अत: उनकी रचनाओं में अरबी-फारसी के शब्द स्वत: आ गये । गुजरात के कबीर परम्परा के निम्नलिखित संतों में हम इस भाषा का प्रभाव पाते हैं ।

निर्वाण साहब की साखियों में अरबी-फारसी के शब्द इस प्रकार गुंथे हुए है जैसे कि माला में मोती, दिदार, नूर, पाक, दिलदार शब्दों के बिना अन्य शब्द में व्यंजना इतनी मुखरित नहीं होती ऐसा प्रतीत होता है - उनकी कुछ साखियाँ उदाहरण स्वरूप प्रस्तुत है -

नूर (अ.) दिदार (फा.) - जिसने दिदार देखिया, ता मुख छाये नूर।[1]
पाक (उ.) दिलदार (फा.) - पाक जहाँ साहिब की, डाढे रहो दिलदार ।[2]
गाफिल (अ.) यारो मत गाफिल बनो, अवसर चुके अजान ।[3]

उपरोक्त साखियों में "दिदार" नूर आदि शब्द के प्रयोग होने से कवि द्वारा व्यक्त किये गये भाव अधिक मार्मिक और रसात्मक हो गये हैं । इनके स्थान पर अन्य ततसम और तदभव शब्द इतने प्रभावोत्पादक नहीं होते ।

नाथाजी काका की साखियों में अरबी-फारसी की छौंट है -

पाक (उ.)
दिल (उर्दू) - नाम प्रभू का पाक है, दिल चाहे जपो नाम ।[4]

लोचनदास की साखियों में भी अरबी-फारसी का असर है -

साहिब (अ.) लोचन कहे पुकार के, राखो साहिब से प्रीत[5]

---

(1) संत निर्वाण साहब - (पृ0 862)
(2) संत निर्वाण साहब - (पृ0 861)
(3) संत निर्वाण साहब - (पृ0 863)
(4) माणेकलाल राणा से प्राप्त हस्तप्रत से उपलब्ध
(5) माणेकलाल राणा से प्राप्त हस्तप्रत से उपलब्ध

अनवरखान फारसी शब्दों के द्वारा अपने भाव व्यक्त करते हुए कहते हैं -

दिल (फा.) मोम दिल बनाइया, पठान थे कूर कहार
पीर (फा.) सोही मरसूद पीर को, अनवर खाँ के जूहार ।[1]

चेतन स्वामी की साखियों में अरबी-फारसी के प्रयोग से रसात्मकता बढ़ गई है -

मेरे साँई चले गये, हरि मिलन सुखवंद
दुनिया (अ.) चेतन रोते रह गये, यह दुनिया पाखंड ।[2]

भाभाराम ने भी अपनी साखियों में अरबी-फारसी के शब्दों का प्रयोग विपुल परिमाण में किया है -

दिदार (फा.) खोजन हार को पाईया, पिवजी का दीदार
सराह (अ.) संसार देखी सराह एक आवे एक जाय,
गाफिल (अ.) भाभाराम गाफिल हुई, कब तक यहाँ ठहराय ।[3]

वस्ता ने कहीं-कहीं फारसी के शब्द प्रयोग से बड़ी चोटदार साखियाँ लिखी हैं -

दिवानी, दर्द (फा.) दर्द दिवानी बावरी, नफ्फट भई हुं नार
गैब (अ.) गैब गोली घट मां लगी, कई परे सुझाय ।[4]
- अंग विरहीजन को

---

(1) माणेकलाल राणा से प्राप्त हस्तप्रत से उपलब्ध
(2) माणेकलाल राणा से प्राप्त हस्तप्रत से उपलब्ध
(3) संत भाभाराम (पृ0 669)
(4) पाठकजी से उपलब्ध हस्तप्रत से

रविसाहब कबीर परम्परा के होने के कारण उनकी साखियों में अरबी, फारसी के शब्दों की बहुलता पायी जाती है । उदाहरणार्थ कुछ साखियाँ प्रस्तुत हैं -

बाजीगर (फा.) काल बाजीगर जगत का, तीन लोक कु खाय
मेहबूब (अ.) तब मिले मेहबूब से, जब मन होवे हाथ
गफलत (उ.) गफलत में गाफिल रहया, हरि कछु जान्या नाहे ।[1]

राजे एक मोलेसलम मुसलमान होने के कारण उनकी साखियों में अरबी-फारसी के शब्द स्वत: ही आ जाते हैं -

नूर (अ.) नूर ता हारे नाम का केहे राजे रघनाथ, 42
अजब (उ.) अजब कला कीरतार की, राजे देख वियार 16
आसरा (उ.) दूजा मिले न आसरा, दूजा करू न काम, 32
बेहाल (अ.) पड़ा रहे बेहाल सो, हाल कू जानत नाहे,[2]

लोचन स्वामी ने अरबी के प्रयोग से अपनी साखियों का प्रभावोत्पादक बनाया है -

साहिब (अ.) मिलन चाहो साहिब को, हक्क से रहा हजूर
हक्क (अ.) लोचन हक्क पेखे बिना, साहिब को घर दूर[3]

साखियों में शब्द समूह

	तदभव	-	तत्सम
(1)	गीर	-	गिरि
(2)	गेहवर	-	गहवर

गीर गेहवर सब ढुढीआ ।। ढुंढया देसवदेस ।।
ज्ञानी राम न पाइये ।। बीन सतगुरु उपदेस ।।[4]

---

(1) रवि साहब नी साखियाँ - (पृ0 281, 306, 236)
(2) राजेकृत काव्य संग्रह - (पृ0 219, 216, 218, 221)
(3) माणेकलाल राणा से उपलब्ध ह0लि0 से
(4) ज्ञानीजी नी साखियाँ - ह0लि0

उपरोक्त साखी में कवि ने गिरी के स्थान पर "गीर" तदभव शब्द का प्रयोग किया है । कवि ने मात्राओं का ध्यान रखा है । तुक की दृष्टि से गीर के नीचे तीसरे चरण में "ज्ञानी" शब्द है । अतः तुक और मात्रा मेल के लिए कवि ने गिरि के स्थान पर "गीर" शब्द का चयन किया है । उसी प्रकार गहवर शब्द भी उच्चारण की दृष्टि से क्लिष्ट है । सरलता से उच्चारण के लिए "गहवर" शब्द उत्तम है । अतः सामान्य जनता के गायन और पाठ करने में सरलता हो इसलिए कवि ने "गीर गेहवर" शब्द का प्रयोग किया है । तदभव शब्द के कारण साखी रसमय हो गई है । इसी प्रकार तत्सम शब्द "प्रसाद" भी उच्चारण की दृष्टि से "परसाद" से कठिन है । ग्रामीण वातावरण में रहने वाले तथा अशिक्षित लोगों के द्वारा इस शब्द का प्रयोग करना निश्चय ही कठिन होता होगा । इसी प्रकार तेजानंद द्वारा "शणगार", विरथ, क्षण शब्दों के स्थार पर ग्रामीण परिवेश से प्रभावित शणगार, विरथ और कारज शब्दों का साखियों में प्रयोग समीचीन है, ऐसा प्रतीत होता है ।

	तदभव	-	तत्सम
(3)	मर्म	-	भ्रम
(4)	पूरस	-	पुरूष
(5)	परसाद	-	प्रसाद
(6)	माध्य	-	मध्य
(7)	दरिद्री	-	दरिद्र
(8)	संशै	-	संशय

---

(3)	दूजा मर्म अनेक	-	ज्ञानीजी ह०लि०
(4)	आध्य पुरस का नाम		ज्ञानीजी ह०लि०
(5)	सतगुरू के परसाद ते । पाआ राम आधार ।।		ज्ञानीजी ह०लि०
(6)	मेरी मेरी करी लढ़े आप आप के माध्य		वस्ता ह०लि०
(7)	दरिद्री कु डर कैसो ? डरतो रहे सहुकार		वस्ता ह०लि०
(8)	काल कुत्ता वहाँ क्या करे संशै बाध कुमार		वस्ता ह०लि०

- वस्ता नी साखियों

	तदभव	-	तत्सम
‖9‖	शणगार	-	श्रृंगार
‖10‖	विरथ	-	व्यर्थ
‖11‖	कारज	-	कार्य
‖12‖	छीन	-	क्षण
‖13‖	पैसी	-	प्रवेश
‖14‖	सत्तनाम	-	सत्नाम
‖15‖	जकत	-	जगत
‖16‖	अनरथ	-	अनर्थ
‖17‖	अमूलख	-	अमूल्य
‖18‖	रूदिये	-	हृदय
‖19‖	हरदे	-	हृदय
‖20‖	विख	-	विष

‖9‖	कनक शणगार विचार में एक ही तत्व सार	वस्ता ह०लि०
‖10‖	विरथ उमरीया बीत गई अब क्यों रोना रोई	तेजानंद
‖11‖	बीन मांगे फल पाव ही, सब कारज सिद्ध होई	तेजानंद
‖12‖	तेजा छीन में क्या बने - तेजानंद स्वामी	तेजानंद
‖13‖	पवन पैसी ना सके	वस्ता
‖14‖	सतनाम सुनाइया, कृष्णदास गुरूदेव - माणेकलाल राणा से प्राप्त ह०लि० से उपलब्ध	गुलाबदास
‖15‖	रविदास ना जकत कु मिथ्या माथा कुट	रविदास
‖16‖	अनरथ करता अती घणी, सतगुरू मिल्या आप - रविदास नी साखियाँ - पृ० 31	रविदास
‖17‖	रामनाम अमूलख रतन	प्रीतम
‖18‖	प्रीतम पलक न वीसरे रूदिये से रघुवीर	प्रीतम
‖19‖	कहे प्रीतम परमारथी हरदे हरिको हेत	प्रीतम
‖20‖	कहे प्रीतम लागे नहीं, विखिया लहेर लगार	प्रीतम

‡21‡	ब्रेह	-	विरह
‡22‡	जंत	-	जन्तु
‡23‡	जारत	-	जाग्रत
‡24‡	भगती	-	भक्ति
‡25‡	दुलभ	-	दुर्लभ
‡26‡	अगनाने	-	अज्ञान
‡27‡	तत	-	तत्व
‡28‡	अन्द्रादीक	-	इन्द्रादिक
‡29‡	नितर	-	नित्य
‡30‡	त्रट	-	तट

उपरोक्त उदाहरणों से यह स्पष्ट होता है कि गुजरात के साखिकारों ने तद्भव शब्दों का प्रयोग इस प्रकार किया है जैसे स्वत: ही उनकी लेखकी से बह रही है ।

---

‡21‡	साचो ब्रेह ब्रजनार को, छोड़ चली परिवार	प्रीतम
‡22‡	कहे प्रीतम पूरण कला, जाने नहीं जड़ जंत	प्रीतम
‡23‡	कहे प्रीतम पति मिलन कु, जारत रहुं दिनरात	प्रीतम
‡24‡ ‡25‡	दुलभ मनखा देहडिने भगती चंत पड़ी	राजे
‡26‡	अगनाने जाने नहीं राजे सब संसार	राजे
‡27‡	रविदास सांई रामजन, सांई बतावे तत्	रविदास
‡28‡	राजे रज बिजनार की रचे अन्द्रादीक	राजे
‡29‡	चंत चड़ी भगती भली नीतर खाते मार	राजे

गुजराती के ठेठ शब्द :

साखिकारों की रचनाओं में देशज शब्दों की बहुलता पायी जाती है । इसका कारण यह है कि ये गाँव के अनपढ़ लोगों के सम्पर्क में रहते थे । ऐसे अनपढ़ जो उनको गुरू या भगवान समझकर उनके प्रति अपनी श्रद्धा और भक्ति का समय-समय पर निवेदन करते थे । क्योंकि संतों का उद्देश्य था अपनी वाणी को अनपढ़ गंवार के जनमन में रतारना । इस कारण वे जान बूझकर ऐसे आंचलिक और देशज शब्दों का प्रयोग कर लेते जिसको भक्तगण अच्छी तरह समझ लेते । कतिपय देशज शब्दों के उदाहरण प्रस्तुत हैं ।

प्रीतम की साखियाँ उनके जमाने के ज्ञान और भक्ति परम्परा के भंडार हैं । इनकी साखियों में इन दोनों का समन्वय उद्भासित होता है । साखियों में वैराग, भक्ति, ज्ञान, माया आदि विषयों को इस प्रकार प्रस्तुत करते थे कि इसका सीधा प्रभाव पड़ता था । माया के विषय में कवि कहते हैं -

"माया मोटी भास की पड़्या जीव ता मांय"[1]

---

(1) प्रीतम वाणी - माया अंग (पृ0 172)

प्रीतम ने "भासकी" (भ्रम में डालने वाली) शब्द के प्रयोग द्वारा माया के निन्दनीय रूप पर स्पष्ट प्रहार किया है ।

"कुंदन काप लागे नहीं, वलग भले होय हीन"[1]

ब्रह्म को महत्व देने के कारण उसे तुच्छ धातु से श्रेष्ठ बताया है । (वलग = तुच्छ, हलकी धातु)

इन ठेठ शब्दों के प्रयोग द्वारा कवि का उद्देश्य स्पष्ट होता है और साखी का महत्व भी बढ़ जाता है ।

	ठेठ गुजराती शब्द	-	अर्थ
(1)	कोठा	-	खट्टा फल
(2)	कोथलो	-	थैली
(3)	दो दला	-	गड़बड़
(4)	धणी	-	पति
(5)	साचवे	-	सम्भालकर
(6)	नड़े	-	हैरानकरे
(7)	मटी	-	मिटना
(8)	ताणा ताण	-	खिंचातानी

(1) कहे प्रीतम फल अवका, कोठा कहे न कोय - (प्रीतम वाणी) (पृ0 100)
(2) माया गांधी कोथलो, चीज अनेक ता मांही - प्रीतम वाणी (पृ0 87)
(3) कहे प्रीतम सब दोदला जाने जानन हार - प्रीतम वाणी (पृ0 87)
(4) धणी मिला धरणीधरा काहे न कीजे ठाठ - रा0काव्य संग्रह (पृ0 218)
(5) राजे समीआ साचवे तु भगती आवे भाग - रा0काव्य संग्रह (पृ0 218)
(6) अब मोचे माया ना नड़े - रविदास कृत साखियों (पृ0 230)
(7) एकरस सब देखिया तब मटी ताणा-ताण - वस्ता नी साखियों (ह0लि0)
(8)

(9)	अंगेग	-	सम्पूर्ण
(10)	बकोर	-	शोर करना
(11)	रूड़ी, नडियात	-	सुन्दर
(12)	तेड़वाने	-	बुलाने
(13)	छत	-	उपस्थित
(14)	हीड़ते	-	चलना
(15)	छती	-	प्रकट करना
(16)	भेगल	-	अहंकार, मदमत्त
(17)	वांक	-	दोष
(18)	ढेढ	-	निम्न जाति के लोग
(19)	वहाला	-	प्यारा
(20)	थीगड़ थागड़	-	फटा पुराना
(21)	गटगटीओ	-	बक बक करने वाला
(22)	लगार	-	क्षण के लिए

---

(9) अंग-अंग मली रहयो अविनाशी के माध्य - वस्ता नी साखियों

(10) केहे राजे को ना रहे फोकट करे बकोर - रा०क०काव्य संग्रह (पृ० 284)

(11) जे रूडी उपजी अंतरंग की बात - रा०कृत काव्य संग्रह (पृ० 285)

(12) अंध कुपमा पोते पड़ा, वीजाने तेड़वाने अड़ो - रा०का०संग्रह (पृ० 214)

(13) जे राजे वैकुंठ नहीं तै छत देखू इंत - रा०कृत काव्य संग्रह (पृ० 228)

(14) हरदे पर हरी हीडते गोपी गोवन्द ठाठ - रा०का०संग्रह (पृ० 228)

(15) तांहां छत छती ने किजीये जहां नहीं गान वचेक -रा०का०संग्रह (पृ० 228)

(16) माग न पामे मम्नवी भेगल राखें मन - रा०कृत काव्य संग्रह (पृ० 223)

(17) रविदास राह भुला पड़ा किसका काढे वांक - रा०का०संग्रह (पृ० 236)

(18) भक्ती करे सो उगरे, जो कोई ढेढ चमार - रविसाहब नी साखियो (पृ० 61)

(19) विरही कु बहाला नहीं, विषय भोग व्यवहार - प्रीतम वाणी (पृ० 76)

(20) थीगड़ थागड़ शिव के अंग ऊपर ले ओड़ - रविसाहब कृत सा० (पृ० 226)

(21) गटगटीओ गोला करे कहे भ्रमर मेरा नाम - वस्ता (ह०लि०)

(22) कहे प्रीतम सहजे चले, नाहीन खेंच लगार - प्रीतम वाणी (पृ० 101)

(23)	पंसारी	-	ठीक
(24)	ओलखे	-	पहचान
(25)	खरपड़ी	-	हसिया
(26)	रड़ता	-	रोता (रोना)

प्रीतम ने अपनी साखी में "कोठा" शब्द का प्रयोग करके एक नया अर्थ प्रस्तुत किया है । आम का फल खट्टा होता है और कोठा भी खट्टा होता है परन्तु आम का फल जब पक जाता है तो उसमें मिठास आ जाती है जबकि कोठा अन्त तक खट्टा रहता है । कवि आम को सज्जन व्यक्ति के प्रतिक के रूप में प्रयोग किया है । कोठा की खटास अपरिपक्वता का प्रतिक है । कवि ने ठेठ गुजराती शब्दों का प्रयोग करके इस प्रकार के नये उपमानों की स्थापना की है जिससे एक रसात्मक सम्बन्ध पूरी कविता में व्याप्त है । इस शब्द (कोठा) के व्यतीत अगर अन्य शब्द रखा जाता तो अर्थ और परिवेश की दृष्टि से यह साखी एक साधारण साखी बन कर रह जाती । यह कवि की विशेषता है कि आंचलिक शब्दों का प्रयोग करके एक भावात्मक प्रतीक उपस्थित किया है । इसी प्रकार कोथली, दोदला, धणी, बकोर, बहाल, खरपड़ी, गटगटीओ आदि शब्दों का प्रयोग एक विशिष्ट अर्थ को व्यंजित करता है और कवि ने इसका प्रयोग परिवेश को ध्यान में रखकर किया है । खरपड़ी, कोठा, रूढ़ी आदि शब्दों में ब्रह्म, माया, विषयक तत्वों को समझाने का प्रयास किया है । इससे उनकी शब्दों को उपयुक्त स्थानों में और प्रसंग विशेष में प्रयोग करने की कुशलता प्रगट होती है ।

गुजराती साखिकारों की इस प्रयोग प्रणाली से एक अन्य तथ्य की भी पुष्टि होती है कि उनकी मंशा न केवल उपदेश देने की थी अपितु प्राप्त विशेष में रहकर दो प्रान्तों के बीच भेद-भाव को मिटाकर एक साधारण धार्मिक समन्वय का

---

(23) कहे प्रीतम समान सब नाहीं पंसारी प्रीछ - प्रीतम वाणी (पृ0 108)

(24) समज थकी हरि ओलखे, ओलखे उपजे हेत - प्रीतम वाणी (पृ0 103)

(25) खेतर जोती खरपड़ी, सागर जे तो वधण - प्रीतम वाणी (पृ0 84)

(26) राजे रड़ता सहू करे, पण आवे नहीं महाराज - राजे कृत का0सं0 (पृ0 18)

वातावरण स्थापित करना तथा अपने प्रदेश के लोगों को अन्य प्रदेश के भाषा और संस्कृति के प्रति जागरूक बनाना ।

गुजराती साखिकार दादू, रवि साहब, गुलाबदास, प्रीतम आदि ने ब्रज, राजस्थानी, पंजाबी, सिंधी, अरबी-फारसी, उर्दू भाषा को अपनी साखियों में प्रयोग करके अनेकरूपता में एकता को स्पष्ट किया है ।

गुजरात के संतों ने न के-वल प्रांतविशेष की भाषा के ठेठ और परिमार्जित रूपों को अपनी साखियों में स्थान दिया है बल्कि पारिभाषिक तथा ततसम शब्दावली का भी प्रयोग अपनी साखियों में किया है । इससे उनके संस्कृत भाषा ज्ञान का संकेत मिलता है । संतों में जो ततसम भाषा प्रयोग का प्रपात दिखाई पड़ता है वह गुजरात के साखिकारों की पारिभाषिक वस्तु के साम्यक अवबोध एवं अभिव्यक्ति कुशलता का संकेत है । जो संत थोड़े पढ़े-लिखे और मेधावी हैं उनकी भाषा में विशेष दृष्टिगत होता है । अखा, प्रीतम, निर्वाण साहब, निर्मलदास आदि ऐसे कवि हैं जिनकी भाषा में संस्कृत और अरबी-फारसी दोनों के तत्सम और तदभव रूपों का विपुल फिर भी सहज एवं स्वाभाविक प्रयोग देखा जा सकता है । इन साखिकारों की वाणियों में ततसम शायद अंगुठी में जड़े नगीने की भांति इस प्रकार सहजता से जड़ दिए गये हैं कि इससे साखी की अभि-व्यंजनाभिव्यक्ति और बढ़ गई है । अब हम साखियों में कहावतों और मुहावरों के प्रयोग पर दृष्टिपात करेंगे ।

<u>मुहावरें और कहावतें</u> :

साखियों में मुहावरों और कहावतों के सफल प्रयोग से संप्रेषण में एक ऐसी शक्ति आ जाती है जो मानव हृदय को बेधकर उसके अन्तरस्थल में समा जाती हैं । बोलचाल की भाषा में निरंतर प्रयुक्त होने वाले वे मुहावरें और कहावतें जो अपने प्राकृत रूप में इनकी बोली के साथ हिल मिल गये थे, इनकी साखियों में प्रयुक्त हुए हैं ।

मुहावरों और कहावतों में प्राय: तद्भव रूढ़ और परम्परागत शब्दों का प्रयोग होता है । इसलिए ये भाषा विशेष की देन होते हैं । चूंकि मुहावरों और कहावतों का प्रयोग प्रसंग विशेष में ही होता है, जो सीमित होते हैं इसलिए इनका प्रयोग करने के लिए प्रसंग की श्रष्टि करने की दक्षता प्राप्त करनी चाहिये बिना विशेष प्रसंगों की श्रष्टि किये कोई मुहावरों या कहावतों का समुचित प्रयोग नहीं कर सकता । इसके लिए जीवन का विशद अनुभव अपेक्षित हैं । इस विषय में गुजरात के साखीकार और संत माहिर थे । इनको विशाल जन-जीवन का खरा अनुभव था । आध्यात्मिक क्षेत्र के उतार-चढ़ाव उसमें बाधा या सफलता, जीवन विषयक ज्ञान आदि जैसे विषयों का भण्डार उनके पास था । अत: संतों ने उन्हीं का प्रयोग किया । इनकी साखियों में मुहावरों और कहावतों की संख्या सैकड़ों और हजारों की हैं । शायद ही कोई ऐसा अंग होगा जिसमें मुहावरों और कहावतों का प्रयोग न हुआ हो ।

प्रीतम ने अपनी साखियों में विपुल परिमाण में मुहावरों का समुचित प्रयोग किया है । उदाहरणार्थ कुछ साखियाँ प्रस्तुत हैं -

(1) अंबु मां नहीं आंतरो, व्योम विषे नहिं ताड़[1]

ब्रह्म की सर्वव्यापकता को "अंबु मां नहीं आंतरो" कहकर स्पष्ट किया है जिस प्रकार अथाह सागर एवं विशाल व्योम में विभाजन संभव नहीं है उसी प्रकार ब्रह्म और विश्व में भी कोई विभाजन सम्भव नहीं है । इस विशेष मुहावरे के प्रयोग से कवि ने इस साखी में अखण्डता के भाव की साम्यक अभिव्यक्ति की है । एक अन्य साखी में कवि ने मुहावरें के द्वारा जीवन मुक्त संत की प्रशंसा की है । जिस प्रकार सती, आद्यांत भक्ति भाव से अपने पति की सेवा करती है उसी प्रकार एक भक्त को निर्लिप्त भाव से ईश्वर की सेवा करनी चाहिए ।

---

(1) प्रीतम वाणी (पृ0 91)

§2§ सती सजे नख शिख लगी, अंगे सौ शृंगार[1] 4

§3§ कहे प्रीतम आशा धरे, तो कहा कर्या सब फोक[2] 23

ज्ञान गिरा व्यक्त करके फल प्राप्ति की आशा नहीं रखना चाहिये । इस भाव को कवि ने एक प्रचलित गुजराती कहावत के द्वारा व्यक्त किया है -

§4§ कहे प्रीतम आपा मिटे, तब भेटे भगवान[3] 27

मानव मन के अहंकार भाव के नाश होने पर ही ईश्वर प्राप्ति सम्भव है । "आपा मिटे" कहकर कवि ने यह भलीभांति स्पष्ट किया है कि अहता भाव के रहने पर भगवान भक्ति नहीं हो सकती है ।

कहीं कहीं प्रीतम ने देशज शब्दों से रंकित मुहावरों को इस प्रकार संजोया है कि जैसे नयी रूढ़ियों का सर्जन किया हो । "अतनु पत करवुं वाफी मरवुं, डबो करी नाखवो, लार न छोड़वी आदि का साखियों में प्रयोग किया है । प्रीतम द्वारा नियोजित मुहावरें और कहावतें इतने सचोट है कि भावार्थ सीधा श्रोता के अन्तरस्थल पर अपना प्रभाव स्थापित करता है ।

§5§ सोहुं-सोहु होत है, नख शिख सकल शरीर,
प्रीतम पलक न वीसरे, रूदिये सो रघुवीर[4] 4

तल्लीनता और एकाग्रचित्त होकर भक्त को ईश्वर का ध्यान धरना चाहिये ।

राजे की साखियों में मुहावरों का प्रयोग यत्र-तत्र द्रष्टव्य है । मुर्ख व्यक्ति को ज्ञान दान करते करते अपनी भी विचार शक्ति नष्ट हो जाती है,

---

§1§ प्रीतम वाणी - §पृ0 97§

§2§ प्रीतम वाणी - §पृ0 83§

§3§ प्रीतम वाणी - §पृ0 83§

§4§ प्रीतम वाणी - §पृ0 83§

इसी भाव को स्पष्ट करने के लिए कवि ने "गरथ गांठ कू जात" कहा है । करे बकोर हासी होत, लगे सूना आदि मुहावरों के प्रयोग से कवि ने अपने वक्तव्य को स्पष्ट रूप से प्रस्तुत किया है । व्यंजना इतनी स्पष्ट और सरल हो गयी है कि अध्यात्म विषयक गूढ़ तत्वों का भी सरलीकरण हो गया है ।

§6§ मूरख कु परमोधता, गरथ गांठ कू जात[1] 81

§7§ केहे राजे को नां रहे फोकट करे वकोर[2] 104

§8§ कांन धरूनी केसना, जगमां हांसी होत[3] 126

§9§ राजे रघूवर जानकी जीवने प्रांण आधार, इन बीना मोकू लगे सूना सब संसार[4]

§10§ ब्रज भोमी राजे केहे, वैकुंठ से अती उच्च
ऐसे है सब कैसारे, मुख ऊपर जु मुंछ ।[5] 142

श्रेष्ठ या सर्वोच्च स्थान पर आश्रित भाव को स्पष्ट करने के लिए कवि ने उपरोक्त कहावत का प्रयोग किया है । जिस प्रकार मुँह के ऊपर मुँछ शोभायमान होती है उसी प्रकार ब्रह्म भूमि भी सबसे श्रेष्ठ है ।

वस्ता ने विपुल परिमाण में कहावतों एवं लोक रूढ़ि प्रयोगों का सहज विनियोग किया है । कुछ एक उदाहरण द्रष्टव्य है -

§11§ कोई कोई कु प्रकाशे नहीं, नहीं लेण नहीं देण । 3
- अंग मिथ्या ज्ञानी को (ह.लि.)

§12§ एक सब देखीया तब मटी ताणा ताण 20
- अंग मिथ्या ज्ञानी को (ह.लि.)

---

§1§ राजे भगत - §पृ0 222§

§2§ राजे भगत - §पृ0 224§

§3§ राजे भगत - §पृ0 226§

§4§ राजे भगत - §पृ0 227§

§5§ राजे भगत - §पृ0 228§

संतराम महाराज ने "गुरु बावनी" नामक कृति में अनेक मुहावरों का प्रयोग किया है । उदाहरणार्थ कुछ मुहावरेदार साखियाँ प्रस्तुत हैं -

(13) सतगुरू मोए आन मिले, तब ताट हुआ एक सार[1] ।।

"एक सार" कहावतका प्रयोग करके कवि ने "ब्रह्म प्राप्ति में सहजता" का आभास कराया है ।

(14) "द्वापर की ना ध्यान समाधि , कलयुग माला फेरी[2] - 29

नामस्मरण का महत्व प्रतिपादित किया है ।

(15) झड़ झमक तो जानू नहीं, ने बोलूं काला धोला

कवि ने अलंकारिक और चमत्कार पूर्ण भाव के प्रयोग को व्यर्थ कहा और भावपूर्ण भोलेपन को समर्थन किया है ।[3]

जीवणदास (राम कबीर) की साखियों में मुहावरों का सुंदर प्रयोग यत्र-तत्र दृष्टव्य है -

(16) सीता पति विन ओर कहे । तो ताके मोड़े छाट ।।[4] 30

"तज्य व्यक्ति" को कवि ने काव्यात्मक रूप से स्पष्ट किया है । राम को छोड़कर अन्य का ध्यान करनेवाला व्यक्ति तज्य है ।

(17) ललो पतो करे जीवणा । तो कयो डरपे जमराण ।।[5] 6

---

(1) गुजरात के संतों की हिन्दी वाणी - (पृ0 256)
(2) गुजरात के संतों की हिन्दी वाणी - (पृ0 258)
(3) गुजरात के संतों की हिन्दी वाणी - (पृ0 258)
(4) उदाधर्म - (पृ0 192)
(5) उदाधर्म - (पृ0 126)

ललो पतो (Flattering words) करना सच्चे भक्त को शोभा नहीं देता । कवि के अनुसार यमराज से डरकर क्यों उसकी अनावश्यक प्रशंसा करें । अगर भक्ति में निष्ठा है तो ईश्वर रक्षा करेगा ही । उपयुक्त मुहावरे के प्रयोग से ~~मु~~ साखी में लक्ष्यार्थ चोटदार बन गई है । मुहावरों के साथ-साथ उपयुक्त स्थानों में कहावतों का सुष्ठु प्रयोग किया होने के कारण उनका आत्मानुभूति विषयक तथ्य अधिक मार्मिक होने के साथ-साथ काव्य कला की दृष्टि से उच्च श्रेणी का बन गया है । कुछ एक कहावतों का उदाहरण प्रस्तुत है जिससे उनकी कला कौशल तथा सामाजिक जागरूकता का प्रमाण मिलता है क्योंकि समाज में यत्र-तत्र प्रयोग में आने वाले साधारण कहावतों के द्वारा ही गूढ़ विषयों को स्पष्ट करने का उत्तम प्रयास गुजरात के कवियों द्वारा किया गया है ।

स्मरण में निष्ठा की भावना और पूर्ण समर्पण हो तो ईश्वर की प्राप्ति सहज हो जाती है । अत: भक्त प्रत्येक क्षण ईश्वर का स्मरण मनन करते रहता है और उल्लासित रहता है । इसी भाव को कवि ने "आठो पहर उल्लास" कहकर व्यक्त किया है । साखी प्रस्तुत है -

(18) घड़ी पहोर सुमरण कहा, सुमरण सासो उसास
कहे प्रीतम रहे अंग मा आठो पहर उल्लास । 5 (पृ0 84)

प्रीतम ने मन की अवस्था को अडिग ऐसे मेरू पर्वत के मुहावरे द्वारा प्रस्तुत किया है । अडिग स्थिर, दृढ़ता के रूप में "मेरू पर्वत" का रूढ़ प्रयोग प्राय: सभी कवियों में देखा जाता है । जिस प्रकार "हिमालय" अपनी विशालता के लिए विख्यात है उसी प्रकार "मेरू" स्थिरता के लिए प्रस्थापित है । भक्त का मन भी ईश्वर के ध्यान में मेरू पर्वत की तरह अडिग है । कवि ने प्रकृति के सुन्दर और स्थापित उपकरणों का कहावतों में प्रयोग करके अपनी कला-कौशल का परिचय दिया है ।

(19) मेरू डगे तो मन डगे, रहे भजन लवलीन 8 (पृ0 84)
(20) मोह टले ग्रंथि गले, मले त्रिभुवन नाथ,
कहे प्रीतम फेरो फले, हरि स्मरण हैया साथ ।6 (पृ0 85)

"फेरो फरे" मुहावरे के प्रयोग द्वारा कवि यह स्पष्ट करना चाहते हैं कि हरि के स्मरण करने पर जन्म धारण करना सफल होता है ।

§21§ सज्जन भंजन भ्रान्त के, उपजावे आनन्द
कहे प्रीतम एक पलक में, काटे भव के फंद । 15 §पृ0 102§

सज्जन व्यक्ति रक्षणहार की तरह होता है । वह पाप कर्मों से हमारी रक्षा करता है और हमारी भ्रांत धारणाओं को दूर कर हमें सांसारिक आवागमन से मुक्त कर देता है ।

§22§ कोटी विघन विच में पड़े, सज्जन तजे न संग
कहे प्रीतम क्या उतरे, चढ्या चोल का रंग ।

जिस प्रकार कपड़े पर चोल का रंग एक बार चढ़ने पर नहीं उतरता उसी प्रकार सज्जन व्यक्ति कभी भी साथ नहीं छोड़ता ।

गुजरात के साखिकारों की यह विशेषता है कि उन्होंने अति साधारण से साधारण विषय को भी उपयुक्त मुहावरों और कहावतों के द्वारा अपनी साखियों को विशेष प्रभावपूर्ण कर दिया है । अज्ञानी व्यक्ति ज्ञानाभाव के कारण उसकी निर्णय शक्तिहिन होता है । अत: उपयुक्त विवेचन न कर सकने के कारण उसे कार्य में सफलता मिलने की सम्भावना भी कम होती है । इसलिए उसको व्यर्थ ही मेहनत करनी पड़ती है या उसकी मेहनत भी व्यर्थ होती है, उसी प्रकार जिस प्रकार धूल पर लिपना व्यर्थ होता है । इसी भाव को कवि ने "खुंदा खमें न काय" कहकर स्पष्ट किया है जिसका शाब्दिक अर्थ है "व्यर्थ" ।

§23§ समज बिन साधन करे, सो फलरूप न होय
कहे प्रीतम धूल पर लीपण खुंदा खमे न कोय । 6 §पृ0 108§

सच्ची समझ के बिना आदमी को दूध और दही में भी उनकी सफेदी के कारण, कोई फर्क नहीं दिखता । "तक्र और दूध होई एक" अर्थात् भेद न कर पाना ।

§24§ कहे प्रीतम समज्या विना तक्र दूध दोई एक 7 §पृ0 103§

वस्ता ने एक ही साखी में एकाधिक मुहावरों का प्रयोग करके अपनी काव्य कला का परिचय दिया है । इससे साखी में न केवल अर्थवृद्धि हुई है अपितु साखी सरल और सरस एवं जन साधारण के लिए सहजग्राह्य भी हो गई है क्योंकि उपमा उनकी दैनिक कार्य से सम्बन्धित है । लिपना पोतना गाँवों में प्राय: देखा जाता है । उसी को आधार बनाकर कवि ने ब्रह्म विषयक गुढ़ तत्व को स्पष्ट किया है ।

§25§ वेलु कोरा ओटला, लीप्या सड़ा थाय
खूंधू ते खमे नहीं, तरत भागी जाय । 2।
- अप्रकाशित वस्ता नी साखियो - अरस परस को अंग

कवि ने तीन-चार कहावतों का प्रयोग किया है "वेलु (Sand) ना ओटला" रेत की बैठक अस्थायी के अर्थ में "लिप्या सड़ा थाय" लिपने पर अलंकृत होना, कार्य कारी होना, अगर उस पर लिपा जा सकता तो वह अलंकृत होता "खूंधू ते खमे नहीं" अर्थात् खूंदने का श्रम व्यर्थ हो जाता है । जिस प्रकार धूल पर लिपना व्यर्थ होता है उसी प्रकार ईश्वर के स्मरण बिना जीवन व्यतीत करना व्यर्थ है । जीवन धारण और हरि स्मरण को एक दूसरे के पूरक के रूप में स्पष्ट करने का प्रयास किया है ।

कवि द्वारा प्रयुक्त इस साखी से अगर उपरोक्त कहावतों का लोप कर दिया जाय तो यह साखी साधारण हो जायेगी । इस कहावत के द्वारा इसमें प्रयुक्त मूल भावों में वृद्धि हुई है ।

राजे की साखियों में कहावतों की भरमार है । लोगों को आध्यात्मिक ज्ञान प्रदान करना कवि का प्रधान लक्ष्य था । कवि कहता है जो व्यक्ति अज्ञानी है उसे ज्ञानी बनाने में अपने ज्ञान की परख हो जाती है परन्तु मूर्ख को समझाने का अर्थ है सर्वहिन होना । राजे दृढ़ता से कहते हैं वह मर सकते हैं परन्तु ईश्वर का भजन नहीं छोड़ सकते "सौ बातों की बात" की तरह यह निश्चित है । भक्ति की पराकाष्ठा प्रतिपादित की है । चाहे इसके लिए सारा जग उन पर हंसे । उपरोक्त विचारों के उदाहरण प्रस्तुत है -

‡26‡ मूरख कू परमोधता, गरथ गांठ कू जात[1] 8।

‡27‡ मरूं पर मूकू नहीं सु वातु की वात 101 ‡पृ0 224‡

‡28‡ कान धरूनीकेसवा, जग मां हासी होत 126 ‡पृ0 224‡

राजे ने एक साखी में एकाधिक कहावतों का प्रयोग करके अपनी रचना शक्ति का भी परिचय दिया है -

‡29‡ चट लागी पट प्रीतड़ी राजे बन गे वात
हूनी थी सो हो गे, बात बात मा बात 115 ‡पृ0 225‡

ईश्वर से दूर होकर विरही भक्त उनसे मिलन की आश में निशदिन तड़पता रहता है । विरह में भक्त के आँखों से सावन-भादो की तरह आँसू बहते रहते हैं अर्थात् दुःख की पराकाष्ठा । निम्नलिखित साखी में प्रीतम ने एक साथ दो कहावतों के प्रयोग द्वारा आत्मानुभूति को व्यक्त किया है -

‡30‡ विरही ताती आतमा, आठो पहर उदास
कहे प्रीतम लोचन लगे, श्रावण भादो मास ।[2]

"आठो पहर उदास" कहावत के द्वारा कवि ने भक्त की विरह जन्य अजस्र-अखंड उदासी को मार्मिक रूप से व्यक्त किया है । विरह चरमावस्था में है ।

कहावतों और मुहावरों के स्वाभाविक प्रयोग से साखियों में जान सी आ गई है, साखियाँ अधिक चोटदार बन गई है, भावार्थ में सरलता और सहजता आ गई है । लोगों में धर्म विषय जागरूकता लाने के लिए साखिकारों ने घरेलू सरल, परिचित और लोक प्रचलित मुहावरों और कहावतों का प्रयोग किया है । जनता में अध्यात्म की चेतना जागृत करके धार्मिक समन्वय का वातावरण तैयार किया है ।

---

‡1‡ राजे भगत - ‡पृ0 222‡

‡2‡ प्रीतम वाणी - ‡पृ0 77‡

न्याय :

संत साहित्य में न्याय लिखने की सुन्दर परम्परा रही है । इनके प्रयोग से साखियों में एक भावात्मक तथ्य उपस्थित होते हैं । गुजरात के साखिकारों ने न्यायों के प्रयोग से साखियों में विशिष्ट और महत्वपूर्ण अध्यात्मिक सम्बन्धों को प्रस्तुत करने का प्रयास किया है । कुछ उदाहरण प्रस्तुत है -

(1) **दूध-घी** न्याय द्वारा जीव और आत्मा के घनिष्ट सम्बन्ध को स्थापित किया है । कवि के अनुसार जिस प्रकार घी में दूध रहता है उसी प्रकार राम और जीव रहते हैं । वस्ता कहते हैं -

राम हमारे आतमा, हम राम के जीव
अरस-परस भली एक है ज्यां दूध माहे घी । 2
- अप्रकाशित वस्ता नी साखियो - अरस परस को अंग

(2) **प्राण-देह** न्याय द्वारा आत्मा और जीव की अभेदावस्था को स्पष्ट किया है । देह से प्राण के निकल जाने पर जिस प्रकार वह अस्तित्व-हीन हो जाता है उसी प्रकार राम और भक्त का सम्बन्ध भी देह और प्राण जैसा है -

राम हमारे प्राण है, हम राम की देह
अरस-परस भली एक है ऐसी सत्य सेव है । 3

(3) **नेत्र-जोत** न्याय द्वारा वस्ता यह स्पष्ट करना चाहते हैं कि जिस प्रकार नेत्र-तेज के बिना महत्वहीन है उसी प्रकार राम के बिना राम के भक्त का जीवन महत्वहीन है इन दोनों का संबंध रात और दिन की तरह है -

राम हमारे तेज है, हम राम के नेत्र
अरस-परस भली एक है भेलो दिवस रैत । 4
- वस्ता नी साखियों - अरस-परस को अंग

(4) कनक और कामिनी की निन्दा संतों का मुख्य विषय रहा है । कनक की निन्दा संत साहित्य में यत्र-तत्र मिलती है । इसकी परम्परा सिद्धों से होकर उत्तर भारत तथा गुजरात के कवियों में प्रतिफलित हुई है ।[1] परन्तु कवि ने इसे न्याय के रूप में प्रस्तुत किया है । इसके द्वारा कवि ने अभिन्नता का बोध कराने का प्रयास किया है । जिस प्रकार सोने के आभूषण सोने से भिन्न नहीं होते उसी प्रकार जीव भी आत्मा से भिन्न नहीं है । आत्मा और जीव का शाश्वत सम्बन्ध स्थापित किया है । इस प्रकार तत्वतः दोनों में कोई भेद नहीं है एक ही मूल तत्व दोनों में है -

राम हमारे कनक है हम कनक के शणगार
कनक शणगार विचार में एक ही तत्व सार 9

ब्रह्म और जीव का पारस्परिक सम्बन्ध स्थापित करने के लिए बीज वृक्ष न्याय तथा समुद्र-लहर न्याय, पक्षी पंख न्याय आदि अनेक न्यायों का प्रयोग कवि ने किया है । कवि ने सहज, सरल और प्राकृतिक परिवेश से न्यायों का चयन किया है जिससे साधारण जनता के मध्य जागरूकता पैदा हो ।

प्रीतम ने भी न्यायों के सुष्ठु विनियोग से ब्रह्म विषयक अवधारणा को स्पष्ट एवं पुष्ट करने का प्रयास किया है उन्होंने चन्द्र-चकोर के न्याय द्वारा अपने कथन की सत्यता प्रतिपादित की है । चकोर की चाँद से, प्रेम की उपमा साहित्य की अमूल्य निधि है । जहाँ निष्ठा का प्रश्न है वहाँ चकोर का उदाहरण दिया जाता है इसी निष्ठाभाव का प्रीतम ने अध्यात्म के क्षेत्र में प्रयोग किया है । चकोर चाँद को निहारता रहता

---

(1) हिन्दी साहित्य को गुजरात के संत कवियों की देन - (पृ0 266)

है । उसके हृदय में चाँद का ही प्रतिबिम्ब होता है । भक्ति की पराकाष्ठा में भक्त का चकोर की तरह एक निष्ठभाव से ब्रह्म को निहारते रहना ही अध्यात्मके क्षेत्र की सर्वोच्च उपलब्धि है । अत: प्रीतम कहते हैं -

(5) चकोर निहाले चाँद कुं, शशिबिम्ब हृदे मोझार ।[1]

(6) **मोहर छाप न्याय**

राम हमारे मोहर है, हम मोहर पर छाप
अरस-परस एक तारहुं ऐस ही आयोआप ।2

(7) **हस्त त्वचा न्याय**

राम हमारे हस्त है, हम राम की त्वचा
अरस-परस एक अंग है, एही शब्द सच्चा । ।3

(8) **दीपक तेल न्याय**

राम हमारे दीपक है, हम दीपक का तेल
दो मील एक प्रकाश है, अरस-परस का खेल[2] ।4

जिस प्रकार दीपक तेल के बिना प्रज्वलित नहीं होता उसी प्रकार भक्त का जीवन भी उसके भगवान के बिना अर्थहीन है ।

प्रीतम ने अपनी साखियों में न्यायों का प्रयोग किया है । पारसमणि और लोहा का परस्पर सम्बन्ध विख्यात है पारसमणि के स्पर्श से लोहा सोना बन जाता है एक तुच्छ धातु मूल्यवान हो जाती है । इसी भाव को कवि ने स्पष्ट करने के लिए पारसमणि और लोहा के न्याय को लहर-तरंग न्याय, मूल डाल न्याय को विभिन्न अर्थों में प्रयोग किया है । कुछ उदाहरण द्रष्टव्य है ।

---

(1) प्रीतम वाणी - (पृ0 74)
(2) वस्ता नी साखियों (हृ0लि0)

§9§ पारसमणि और लोहा न्याय

"राम नाम पारसमणि, मन लोहा होय हेम"[1] ।4

राम के स्मरण और मनन से भक्त उसी प्रकार राम मय हो जाता है जिस प्रकार पारसमणि के स्पर्श से लोहा सोना हो जाता है ।

§10§ लहर-तरंग न्याय

संत समुद्र की लहर है, वाणी वचन तरंग[2]

संतों को कवि ने समुद्र के लहरों की उपमा दी है और उनके उपदेशों को तरंग कहा है जो कि भक्तों के हृदय में ब्रह्म ज्ञान की तरंगे उत्पन्न करती है ।

§11§ मूल-डाल न्याय

प्रीतम ने संत और भक्त को "संत मूल मैं डाल हुँ, पत्र सकल संसार" ।8 कहकर दोनों में अभिन्नता को स्पष्ट किया है ।

दादू ने दूध और पानी न्याय, नमक और पानी न्याय के द्वारा ब्रह्म और जीव में अभेदावस्था को दर्शाया है ।

ज्यूं जल पैसे दूध में, ज्यूं पानी में लूण ।

उपरोक्त उदाहरणों से यह स्पष्ट है कि गुजरात के साखिकार उपयुक्त स्थानों पर न्यायों के प्रयोग द्वारा अपनी ब्रह्मानुभूति को साखियों में स्पष्ट किया है । अधिकांश न्याय प्रकृति से संबंधित होने के कारण सहजग्राह्य हो गया है । न्याय प्रयोग के क्षेत्र में गुजरात के साखिकारों का यह एक सफल प्रयास है ।

इन न्यायों के सुष्ठ विनियोग के कारण संत कवि रहियादास के - "प्रभुजी तुम चन्दन और हम पानी जाकी बास अंग अंग समानी" पद सहज याद आ जाता है ।

---

§1§ प्रीतम वाणी - §पृ0 57§

§2§ प्रीतम वाणी - §पृ0 57§

सारांशत: गुजरात के साखिकारों को तत्कालिन समाज में प्रचलित विभिन्न प्रकार के कहावतें, मुहावरें और न्यायों के विषय में ज्ञान था । केवल भगवत-भजन में न रमकर सामाजिक उत्थान हेतु जन-समाज में एक प्रहरी के रूप में तटस्थ रहते थे । उनकी साखियों में कहावतें और मुहावरें अखा के शब्दों में "ज्ञान घटा" की तरह आच्छादित हो गई है । परवर्ती अध्याय में हम साखियों में प्रतीकात्मक शैली का अवलोकन करेंगे ।